North Asian International Research Journal of Multidisciplinary

IRJIF IMPACT FACTOR:6.019

ISSN: 2454-2326 Vol. 8, Issue-2 February-2022

Index Copernicus Value: 58.12 DOI NUMBER: 10.5948/2454-2326.2022.00008.0 Thomson Reuters ID: S-8304-2016

NAIRJC A Peer Reviewed Refereed Journal

वैश्विक परिप्रेक्ष्य में श्रीमद्भगवद्गीता और कर्मयोग की सार्थकता

डॉ. अनीता रानी

सहायक प्रोफ़ेसर, हिन्दी विभाग, सनातन धर्म महिला महाविद्यालय, नरवाना(जीन्द), हरियाणा, भारत।

सारांश

श्रीमद्भगवद्गीता सम्पूर्ण वेदों का सार है, यह सम्पूर्ण मानव जाति के लिए एक अमूल्य निधि है। मानव कल्याण ही एकमात्र गीता का लक्ष्य है। गीता का संदेश स्वयं भगवान श्रीकृष्ण के मुखारविन्द से अर्जुन अर्थात् विश्व के प्रत्येक मानव को दिया गया ज्ञान है। इसमें मानव को जीवन की लगभग सभी समस्याओं का समाधान सहजता से मिल जाता है। निष्काम कर्म की महत्ता तथा अनासक्त होकर कर्म करने का संदेश हमें गीता से मिलता है।

कर्मयोग का प्रतिपादन गीता में विस्तृत रूप से हुआ है। गीता के अनुसार जो काम निष्काम भाव से ईश्वर के लिए किए जाते हैं, वे काम मोक्ष प्राप्ति में सहायक सिद्ध होते हैं। श्रीकृष्ण ने अर्जुन के माध्यम से सम्पूर्ण विश्व मानव को कर्मयोग का सन्देश देते हुए कहा है कि हे मनुष्य तेरा कर्म करने का ही अधिकार है, उसके फलों को प्राप्त करने का नहीं, इसलिए हे मानव तू कर्मों के फल का हेतु मन बन तथा तेरी कर्म न करने में भी आसक्ति न हो। श्रीमद्भगवद्गीता संपूर्ण विश्व के लिए कर्त्तव्य–शास्त्र का अनूठा ग्रंथ–रत्न है। सम्पूर्ण मानव जाति के जीवन की इतनी उच्च कल्पना एवं कर्तव्य का इतना उच्च विश्लेषण अन्यत्र कहीं नहीं प्राप्त होता। अतः हम कह सकते हैं कि गीता का स्थाई महत्त्व पूरी मानव जाति के लिए है।

श्रीकृष्ण ने कर्म करने की विशेष प्रकार की कुशलता को ही योग कहा है। हालांकि गीता में ज्ञान व भक्ति की भी बहुत चर्चा की गई है परन्तु कर्मयोग पर विशेष बल दिया है। निष्काम कर्मयोग से न केवल भारत बल्कि विश्व मानव की समस्त समस्याओं का समाधान हो सकता है। गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने मानव जाति को फल की आसक्ति छोड़कर कर्म करने को कहा है। अर्जुन के माध्यम से विश्व को समझाया है कि निष्काम कर्म भावना में ही जगत का कल्याण है।

वैश्विक परिप्रेक्ष्य में श्रीमद्भगवद्गीता और कर्मयोग की सार्थकता

डॉ. अनीता रानी, सहायक प्रोफ़ेसर, हिन्दी विभाग, सनातन धर्म महिला महाविद्यालय, नरवाना (जीन्द), हरियाणा, भारत।

विश्व कल्याण एवं मानव मात्र के स्वयं के व्यक्तित्व विकास के लिए श्रीमद्भगवद्गीता का दिव्य ज्ञान एक अमूल्य निधि है। यह संपूर्ण वेदों का सार है। यह भिन्न–भिन्न उद्भावना एवं अध्यात्मिक प्रवृति वाले प्राणियों के लिए मंगलदायक है। केवल सात सौ श्लोकों की लघुकाय गीता को कामधेनु तथा कल्पवृक्ष की उपमा दी गई है। गीता की लोकप्रियता का एकमात्र कारण मानव जीवन की प्रायः सभी समस्याओं का समाधान प्रदान करना है। जीवन की नश्वरता और उसको सार्थक बनाने का सिद्धान्त, निष्काम कर्म और अनासक्त होकर कर्म करना सब कुछ इसमें निहित है। श्रीमद्भगद्गीता द्वैत, अद्वैत, विशिष्टाद्वैत, विशुद्धाद्वैत इत्यादि किसी भी वाद को अथवा सम्प्रदाय को या सिद्धान्त को नहीं मानती बल्कि गीता का प्रमुख लक्ष्य तो यह है कि मानव चाहे किसी वाद, सिद्धान्त, मत, विचार, देश का हो, मानव कल्याण ही मात्र गीता का लक्ष्य है। गीता का सन्देश स्वयं भगवान श्रीकृष्ण के मुखारविन्द से दिया गया है। मोहग्रस्त अर्जुन अर्थात् विश्व के प्रत्येक मानव को यह सन्देश दिया है जो आधुनिक युग में भी पूर्ण रूप से सार्थक है। गीता का महत्व सार्वभौमिक एवं सार्वकालिक है।

श्रीकृष्ण गीता में निष्काम कर्म की प्रेरणा देते हुए कहते हैं कि मनुष्य को रागद्वेष, शत्रुता मित्रता, प्रेम घृणा को भूलकर कर्म करना चाहिए। जिस दिन मनुष्य राग और द्वेष दोनों के पार हो जाता है उसी दिन वह निष्काम कर्म को उपलब्ध हो जाता है। जब कोई व्यक्ति किसी कार्य को कारण सहित करता है तो वह व्यक्ति कर्म के बन्धन में बंध जाता है और वह निष्काम कर्म नहीं होता। तीन प्रकार का कर्म होता है– एक राग को समर्पित, दूसरा द्वेष को समर्पित और तीसरा राग द्वेष के पार या कहो परमाप्ता को समर्पित, यही तीसरे प्रकार का कर्म निष्काम कर्म है।गीता के अध्याय 2 के श्लोक संख्या 64में श्रीकृष्ण जी कहते हैं

"रागद्वेष विमुक्तैस्तु विषयानिन्द्रियैचूरन

आत्मवश्यैर्विधेयात्मा प्रसादमधिगच्छति

अर्थात् समस्त राग तथा द्वेष से मुक्त एवं अपनी इन्द्रियों को संयम द्वारा वश में करने में समर्थ व्यक्ति श्रीभगवान की पूर्ण कृपा प्राप्त कर सकता है।"[1] श्रीकृष्ण अर्जुन रूपी मानव को सन्देश देते हैं कि तू राग द्वेष को भूल कर कर्म कर। राग द्वेष से बाहर होते ही व्यक्ति सहज सम्पूर्ण आनन्द को उपलब्ध होता है और सर्वमंगल के लिए कार्य करता है। निष्काम कर्म जीवन की एक शाश्वत धारा है जिसे गीता के माध्यम से जाना जा सकता है।

कर्मयोग– कर्म+योग अर्थात् अनासक्त भाव से कर्म करना ही 'कर्मयोग' है। 'कर्मयोग' का प्रतिपादन गीता में विस्तृत रूप से हुआ है। योग का अर्थ 'समत्व की प्राप्ति' है। सिद्धि और असिद्धि, सफलता और विफलता में समभाव रखना ही समत्व कहलाता है। गीता के अनुसार जो कर्म निष्काम भाव से ईश्वर के लिए किए जाते हैं, वे मोक्षरूप परमपद की प्राप्ति में सहायक होते हैं। इस प्रकार कर्मफल तथा आसक्ति से रहित होकर ईश्वर के लिए कर्म करना वास्तविक रूप से कर्मयोग है।

संसार के कल्याण की इच्छा रखने वाले श्रीकृष्ण कहते हैं कि मैं बार–बार इस संसार में आकर में आकर लोगों को अविद्या और अहंकार से मुक्ति दिलाऊँ और उन्हें धर्म के मार्ग पर प्रवत्त करूँ। अपने कर्त्तव्य रूपी कर्म का पालन करने वाला मनुष्य हमेशा विजय को प्राप्त करता है। श्रीकृष्ण जी गीता में मानव को निष्काम भाव से कर्तव्य कर्म को करने का उपदेश देते हुए अध्याय दो के श्लोक संख्या 47 मे वे कहते हैं –

"कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।

मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा कृतो सङ्गोऽस्तवकर्माणि।"[2]

अर्थात् मानव को कम करने का ही अधिकार है, उसके फलों को प्राप्त करने का नहीं। इसलिए हे मानव तू कर्मों के फल का हेतु मत बन तथा तेरी कर्म न करने में भी आसक्ति न हो।

गीता में ज्ञान और भक्ति की चर्चा भी हुई है, परन्तु उसका मुख्य विषय कर्मयोग है, जिसे कई बार केवल योग कहा गया है। श्रीकृष्ण ने कर्म करने की विशेष प्रकार की कुशलता को ही योग कहा है। "योगः कर्मसु कौशलम्:"[3]अर्थात् कर्मों में योग ही कुशलता है अर्थात् कर्मों की सिद्धि असिद्धि में और उन कर्मों के फल की प्राप्ति अप्राप्ति में सम रहना ही कर्मों में कुशलता है।

गीता में सात्विक–राजस–तामस पदार्थों, भावों एवं क्रियाओं की कुछ खास पहचान बतायी गयी है वह इस प्रकार है–

[1]श्रीमद्भगवद्गीता, यथारूप, पृ.सं. 126
[2]श्रीमद्भगवद्गीता, दूसरा अध्याय, पृ.सं. 47
[3]श्रीमद्भगवद्गीता, दूसरा अध्याय, पृ.सं. 50

क) जिस भाव या क्रिया का स्वार्थ से सम्बन्ध न हो और जिसमें आसक्ति एवं ममता न हो तथा जिसका फल भगत्वप्राप्ति हो, उसे सात्विक जानना चाहिए।

ख) जिस भाव या क्रिया में लोभ, स्वार्थ एवं आसक्ति का सम्बन्ध हो तथा जिसका फल क्षणिक सुख की प्राप्ति एवं अन्तिम परिणाम दुख हो, उसे राजस समझना चाहिए।

ग) जिस भाव या क्रिया में हिंसा, मोह एवं प्रमाद हो तथा जिसका फल दुख एवं अज्ञान हो, उसे तामस समझना चाहिए।

इस प्रकार तीनों तरह के भावों एवं क्रियाओं का भेद बतलाकर भगवान श्रीकृष्ण ने सात्विक भावों एवं क्रियाओं का ग्रहण करने तथा राजस एवं तामस भावों एवं क्रियाओं का त्याग करने का आदेश दिया है।

इन्हीं तीन गुणों के बारे में विस्तार से बताते हुए भगवान श्रीकृष्ण श्रीमद्भगवद्गीता के अध्याय 14 के श्लोक नं 5 में कहते हैं –

"सत्त्वं रजस्तम इति गुणाः प्रकृतिसम्भवाः ।
निबध्नन्ति महाबाहो देहे देहिनमण्ययम् ।।[4]

अर्थात् प्रकृति तीन गुणों से युक्त है। ये हैं – सतो, रजो तथा तमोगुण।

हे महाबाहु अर्जुन। जब शाश्वत जीव प्रकृति के संसर्ग में आता है तो वह इन तीन गुणों से बंध जाता है।इसी अध्याय के श्लोक संख्या 8 में वे तमोगुण को व्याख्यायित करते हुए कहते हैं –

"तमस्त्वज्ञानजं बिद्धि मोहनं सर्वदेहिनाम
प्रमादालस्यनिद्राभिस्तन्निबध्नाति भारत।"[5]

अर्थात् हे भरतपुत्र। तुम जान लो कि अज्ञान से उत्पन्न तमोगुण समस्त देहधारी जीवों का मोह है। इस गुण के प्रतिफल पागलपन (प्रमाद), आलस तथा नींद है। जो बद्धजीव को बांधते हैं।

रजोगुण के बारे में बताते हुए कहते हैं"

"रजो रागात्मकं विद्धि तृष्णासङ्ग समभ्दवम् ।
तन्निबध्नाति कौन्तेय कर्मसंगेन देहिनम्।"[6]

अर्थात् हे कुन्तीपुत्र! रजोगुण की उत्पत्ति असीम आकांक्षाओं तथा तृष्णाओं से होती है और इसी के कारण यह देहधारी जीव सकाम कर्मों से बंध जाता है।

[4]श्रीमद्भगवद्गीता, यथारूप, पृ.सं. 449
[5]वही पृ.सं 449
[6]श्रीमद्भगवद्गीता, यथारूप, पृ.सं. 450

सतोगुण को सर्वश्रेष्ठ बताते हुए श्रीकृष्ण जी कहते हैं

'तत्र सत्त्वं निर्मलत्वात्प्रकाशकमनामयम

सुखसंगड़ेन बध्नाति ज्ञानसगड़ेन चानघ।"[7]

अर्थात् हे निष्पाप! सतोगुण अन्य गुणों की अपेक्षा अधिक शुद्ध होने के कारण प्रकाश प्रदान करने वाला और मनुष्यों को सारे पाप कर्मों से मुक्त करने वाला है। जो लोग इस गुण में स्थित होते हैं, वे सुख तथा ज्ञान के भाव से बंध जाते हैं।

गीता के अनुसार सकाम भाव से की हुई यज्ञ, दान, तप सेवा, पूजा आदि ऊँची से ऊँची क्रिया की अपेक्षा निष्काम भाव से की हुई युद्ध, व्यापार, खेती, शिल्प एवं सेवा आदि छोटी से छोटी क्रिया भी मुक्तिदायक होने के कारण श्रेष्ठ है।

श्रीमद्भगवद्गीता साक्षात भगवान की दिव्य वाणी है। इसकी महिमा अपार है, अपरिमित है। गीता ज्ञान का अथाह समुंद्र है, इसके अन्दर ज्ञान का अनन्त भण्डार भरा पड़ा है। रत्नाकर में गहरा गोता लगाने पर जैसे रत्नों की प्राप्ति होती है, वैसे ही इस गीता–सागर में गहरी डुबकी लगाने से जिज्ञासुओं को नित्य–नूतन विलक्षण भाव–रत्न–राशि की उपलब्धि होती है। गीता में संपूर्ण वेदों का सार है। इसकी रचना इतनी सरल और सुन्दर है कि थोड़ा अभ्यास करने से भी मनुष्य इसको सहज ही समझ सकता है, परन्तु इसका आशय इतना गूढ़ और गम्भीर है कि आजीवन निरन्तर अभ्यास करते रहने पर भी उसका अन्त नहीं होता। गीता को जितनी भी बार गहराई से पढ़ा जाए, उतना ही हर बार गीता से गहरा व नूतन अर्थ प्राप्त होता जाता है। गीता के अध्ययन से मानव की हर प्रकार की समस्या का समाधान मिलता है। जगद्गुरू भगवान श्रीकृष्ण का अमर गीत है श्रीमद्भगवद्गीता। योगीराज भगवान श्रीकृष्ण कर्म और नीति से नैतिकता का उपदेश जहाँ मोहग्रस्त अर्जुन रूपी विश्व के प्रत्येक मानव को देते हैं, वहीं अर्जुन रूपी मानव यदि गीता में बताए गए उपदेशों का जब निष्काम भाव से पालन करता है तो सफलता खुशहाली उसके कदम चूमती है।

गीता जीवन के चौराहे पर खड़े मानव को निर्देश देती है। जीवन में समय–समय पर उपस्थित होने वाले प्रश्नों, आशंकाओं, जिज्ञासाओं, समस्याओं का जैसा सुन्दर समाधान गीता के श्लोकों में प्राप्त होता है, वह अन्यत्र दुर्लभ है। यही कारण है कि देश और काल की सीमाओं से परे विश्व के अनेक देशों में, विश्व की अनेक भाषाओं में गीता का अनुवाद हुआ है, जो इस अमर ग्रन्थ की लोकप्रियता और महत्ता को प्रदर्शित करता है। ध्यानयोग, ज्ञानयोग, भक्तियोग से इतर कर्मयोग की अवधारणा, गीता का एक ऐसा चिन्तन है, जो मानव

[7]वही पृ.सं. 449

को हर प्रकार से सक्षम बना सकता है। निष्काम कर्मयोग से न केवल भारत की अपितु विश्वमानव की अज्ञान, अभाव, अन्याय, अत्याचार आदि समस्त समस्याओं का समाधान हो सकता है। यह किसी जाति, धर्म, सम्प्रदाय विशेष के लिए नहीं है, अपितु सबके लिए है।

युवाओं के समग्र विकास में श्रीमद्भगवद्गीता विशेष रूप से सहायक है।

श्रीमद्भगवद्गीता में जीवन पर्यन्त सचेष्ट एवं गतिशील रहकर कर्मण्यता के साथ त्याग एवं धर्म तत्व की सूक्ष्म व्याख्या मिलती है। इसके साथ ही उदात्त लक्ष्य की ओर अग्रसर रहने की प्रेरणा मिलती है। गीता से शिक्षा पाकर मनुष्य नियति से बंधा होने पर भी कर्म की उपेक्षा नहीं कर सकता। वह कार्य करते हुए निडरतापूर्वक अपने जीवनपथ पर अग्रसर होता है तथा कठिनाइयों से न घबराकर अपने लक्ष्यप्राप्ति का प्रयत्न करता है। आज समाज में युवा जिन झंझावतों, समस्याओं से ग्रसित है वहाँ गीता अपने में निहित दर्शन से युवाओं को संशय मुक्त होने का संदेश देती है। कभी कर्म करने का, एकचित्त होकर अपने उद्देश्यों को पूर्ण करने का आभास करवाती है गीता। स्वयं भगवान के मुखारविन्द से निकलने वाली श्रीमद्भगवद्गीता वस्तुतः युवा चित्त की मार्गदर्शिका है। आधुनिक युग में जब युवा अपने सामने आई विपत्तियों से घबराकर अपने कर्तव्य से भटक जाते हैं या अनुचित मार्ग से सफलता पाने का प्रयत्न करते हैं तो उनके सामने गीता कर्म का उपदेश देने वाला अनुपम रत्न है। भारत ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण विश्व के कोने–कोने में कर्मयोगी गीता के उपदेशों से प्रेरित हुए हैं। भगवान श्रीकृष्ण के मुखारविन्द से निकली गीता रूपी सुगन्ध वर्तमान युग के हतोत्साहित मानव के मन की दुर्बलता को दूर करती है।

'प्रत्येक कर्म मानव–जीवन के विकास का सोपान है। मनुष्य अपने जीवन में जो भी कर्म करता है, उसकी शुद्धता और पारदर्शिता पर सर्वाधिक बल दिया गया है, क्योंकि मानव–जीवन में सुख–दुखों के समागम का मूल कारण ही शुभ कर्म और अशुभ कर्म है।'[8] श्री वेदव्यास जी ने महाभारत में गीता जी का वर्णन करने के उपरान्त कहा है कि'गीता सुगीता कर्तव्या किमन्यैः शास्त्रविस्तरैः, या स्वयं पद्यनाभस्य मुखमद्याद्विनीः सुता' अर्थात् गीता सुगीता करने योग्य है इसे भली प्रकार पढ़कर अंतःकरण में धारण कर लेना मुख्य कर्तव्य है जो कि स्वयं पद्यनाम भगवान श्रीविष्णु के मुखारविंद से निकली हुई है, स्वयं श्री भगवान ने भी गीता के महात्मय का बखान किया है। श्रीगीता एक ऐसा अनुपमेय शास्त्र है जिसमें एक भी शब्द सदुपदेश से खाली नहीं है। श्रीकृष्ण जी ने श्रीमद्भगवद्गीता में कर्म की महत्ता पर विशेष बल दिया है। उन्होनें फल की आसक्ति छोड़ कर कर्म करने को कहा है। श्रीगीता में श्रीभगवान ने मानव जाति के लिए धर्मपरक सदाचार व त्यागपरक आचरण

[8]गगनांचल, 11वां विश्व हिन्दी सम्मेलन विशेषांक, पृ. सं 25

के अनुसरण पर जोर दिया है। श्रीगीता निराशा के भंवर में फंसे संसार को सफलता और असफलता के प्रति समान भाव रखकर कार्य करने की प्रेरणा देती है, इसे ही कर्मयोग कहा गया है। श्रीकृष्ण ने अर्जुन के माध्यम से जगत को समझाया है कि निष्काम कर्म भावना में ही जगत का कल्याण है।

श्रीमद्भगवद्गीता सम्पूर्ण विश्व के लिए कर्तव्य–शास्त्र का अनूठा ग्रन्थ–रत्न है। मानव जीवन की इतनी उच्च कल्पना एवं कर्तव्य का इतना उच्च विश्लेषण अन्यत्र प्राप्त नहीं होता। गीता का स्थायी महत्व सम्पूर्ण मानवता के लिए है। इसमें नीतिशास्त्र, समाजशास्त्र, ज्ञान–अज्ञान, कर्तव्य–अकर्तव्य, पाप–पुण्य, धर्म–अधर्म, स्वधर्म–पराधर्म, सत्य–असत्य, आत्म–ज्ञान, कर्म–ज्ञान तथा अनेक दार्शनिक समस्याओं का समाधान किया गया है।

मनुष्य जो भी कर्म करता है उसे कामना के वशीभूत होकर करता है। सकाम कर्म ही भवबन्धन का कारण है। मनुष्य का सकाम कर्म में मोह ही जन्म मरण का कारण है। श्रीकृष्ण जी ने कहा है कि जो मनुष्य भक्तिभाव से मन एवम् इन्द्रियों को वश में कर कर्म करता है, वह विशुद्ध आत्मा वाला होकर भी कर्मबन्धन में नहीं बंधता है। भगवान श्रीकृष्ण श्रीमद्भगवद्गीता में पाँचवे अध्याय के श्लोक संख्या 7 में कहते हैंः–

"योगयुक्तो विश्रुद्धात्मा विजितात्मा जितेन्द्रियः ।
सर्वभूतात्मभूतात्मा कुर्वन्नपि न लिप्यते।।"[9]

अर्थात् जो भक्तिभाव से कर्म करता है, जो विशुद्ध आत्मा है और अपने मन तथा इन्द्रियों को वश में रखता है, वह सभी को प्रिय होता है और सभी लोग उसे प्रिय होते हैं, ऐसा व्यक्ति कर्म करता हुआ भी कभी नहीं बंधता। जो मनुष्य कर्म–फल को परमेश्वर को समर्पित कर कर्म करता है वह जल में स्थित कमल की भान्ति अलिप्त हो मुक्ति प्राप्त कर लेता है। गीता के पांचवे अध्याय के श्लोक संख्या 10 में श्रीकृष्ण जी इसी बात पर बल देते हुए कहते हैं –

"ब्रह्मण्याधाय कर्माणि सडंग व्यकत्वा करोति यः।
लिप्यते न स पापेन पद्यपत्रमिवाम्भसा।।"[10]

अर्थात् जो व्यक्ति कर्मफलों को परमेश्वर को समर्पित करके आसक्ति रहित होकर अपना कर्म करता है, वह पापकर्मों से उसी प्रकार अप्रभावित रहता है, जिस प्रकार कमलपत्र जल से अस्पृश्य रहता है। प्रभु पहले तटस्थ रहकर देखते हैं। फिर नैतिक जीवन का आरम्भ होने पर हमसे सत्कर्म होने लगते हैं, तब हमें शाबासी देते हैं। फिर चित्त के सूक्ष्म मल धो डालने के लिए अपने प्रयत्नों को अपर्याप्त देखकर भक्त जब पुकारता है, तब वह

[9]श्रीमद्भगवद्गीता, यथारूप, पृ.सं. 224–225
[10]वही पृ.सं. 227

अनाथ–नाथ सहायता के लिए दौड़ पड़ते हैं। उसके बाद फल को भी भगवान के अर्पण करके सारा जीवन हरिमय कर देना है। यही मानव का अन्तिम साध्य है। कर्मयोग और भक्तियोग रूपी दोनों पंखों से उड़ते हुए साधक को इस अन्तिम मंजिल तक जा पहुंचना है।

जब कभी मानव कर्तव्य–अकर्तव्य, धर्म–अधर्म, शुभ–अशुभ, हित–अहित के निर्णय में शंका होने से संकटग्रस्त होता है, जब कभी उसके जीवन में कठिन प्रसंग उपस्थित होते हैं और आत्मशक्ति साथ नहीं देती तो उस समय अर्जुन की तरह घबराए हुए उसे श्रीमद्भगवद्गीता बांधती है और उसकी भ्रांतियों को दूर कर धर्मनिष्ठ कर्तव्य के पालन में सहायता देती है। श्रीकृष्णयुक्ति देते हुए अध्याय 3 के श्लोक संख्या 5 में कहते हैं –

न हि कश्चित्क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत्।
कार्यते ह्यवशः कर्म सर्वः प्रकृतिजैर्गुणैः।"[11]

अर्थात् प्रत्येक व्यक्ति को प्रकृति से अर्जित गुणों के अनुसार विवश होकर कर्म करना पड़ता है। अतः कर्म किए बिना तो मनुष्य क्षणभर के लिए भी नहीं रह सकता। खाना–पीना, सोना–जागना, उठना–बैठना,खेलना–कूदना, हँसना–रोना, देखना–सुनना, बोलना – चलना, पढ़ना–लिखना, लड़ना–झगड़ना, मारना–पीटना, ध्यान करना, यज्ञ करना, खेती, व्यापार, कारोबार यहाँ तक कि सांस लेना भी तो कर्म ही है। इनमें से कुछ कर्म शरीर से किए जाते हैं, कुछ मन से, परन्तु हैं तो कर्म ही। कौन सा कर्म कब करना चाहिए और कैसे करना चाहिए? इसी का निर्णय करना गीता हमें सिखलाती है। भगवान श्रीकृष्ण ने कर्म करने की विशेष प्रकार की कुशलता को ही योग कहा है

'योगः कर्मसु कौशलम् ।' कर्म–संयास और कर्म–योग की तुलना करते हुए श्रीकृष्ण ने कर्मयोग को संयास से बढ़कर बताया है।

कर्म में बहुत शक्ति होती है। एक व्यक्ति का कर्म पूरे विश्व को सकारात्मक उर्जा दे सकता है। 'थामस अल्वा एडीसन' ने कर्म किया था एक बल्ब बनाकर और उसके कर्म का परिणाम आज भी दुनिया को मिल रहा है। अल्बर्ट कलमेटे ने बीसीजी टीके जो टीबी के लिए होता है, का आविष्कार फ्रांस मे किया और जिनके कर्मों का परिणाम आज हमारे लिए वरदान है। आज हमें भी ऐसे कर्म की आवश्यकता है, अपने देश के लिए, अपने आप के लिए। हर व्यक्ति का अपना एक सामर्थ्य होता है और हमेंउसी अनुरूप कार्य करना चाहिए। 'अध्याय 3 के श्लोक संख्या 7 में श्रीकृष्ण जी इस बात को समझाते हुए कहते हैं –

[11]श्रीमद्भगवद्गीता, यथारूप, पृ.सं. 136

"नियतं कुरू कर्म त्वं कर्म ज्यायो ह्यकर्मण।

शरीरयात्रापि च ते न प्रसिद्धयेदकर्मणः ।।[12]

अर्थात अपना नियत कर्म करो क्योंकि कर्म न करने की अपेक्षा कर्म करना श्रेष्ठ है। कर्म के बिना तो शरीर–निर्वाह भी नहीं हो सकता। आज मानव अर्जुन है। मानव वो अर्जुन है, जो शिक्षक भी है, इंजीनियर भी है, चिकित्सक भी है और एक मजदूर भी है। आज का हर अर्जुन रूपी मानव अपने आप में एक विधा लिए हुए है। बात सिर्फ समझने की है। जिस प्रकार अर्जुन धनुर्विधा में निपुण क्षत्रिय थे तथा भगवान श्रीकृष्ण ने उन्हें कर्म करने को कहा उसी प्रकार मानव भी अर्जुन है। आज का मानव किसी न किसी विधा में निपुण है तो उसका कर्तव्य बनता है कि वह अपनी विधा का प्रयोग अच्छी तरह से करे। यदि मानव मजदूर, ऑफिसर, सिपाही, शिक्षक इत्यादि जो भी है, वह ईश्वर द्वारा उसको प्रदत्त कर्म है। हमें जीवन में प्रदत्त हर कार्य पूरी निष्ठा, ईमानदारी, जिम्मेदारी, विवेक तथा बुद्धि के अनुसार लोकहितार्थ करना चाहिए और यही हमारा निष्काम कर्मयोग है। गीता द्वारा दिया गया मानव को कर्मयोग का सन्देश सार्वकालिक एवं सार्वदेशिक है। गीता का प्रतिपादित निष्काम कर्मयोग का सन्देश आज मानव के लिए अत्यन्त उपयोगी है। फल की आसक्ति का त्याग कर कर्म, स्वार्थ के धरातल से ऊपर उठकर कल्याण का साधन बन सकता है। गीता मनुष्य के सामाजिक स्वरूप पर बल देती है और निस्वार्थ कर्मशील जीवन का समर्थन करती है। आज मानवता के लिए इस शिक्षा की बहुत उपादेयता है।

इस प्रकार गीता का कर्मयोग आज के विश्व के लिए एक ऐसा संदेश है, जिसे अपनाकर मानवमात्र का कल्याणहो सकता है। कर्मयोग महाभारत युग में भी सार्थक था, आज भी है तथा भविष्य में भी रहेगा।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. Proceeding of International Conference of Nurturing Value in Youth: A Prespective of Srimad Bhagavad Gita, GJU of Sci and Technology, Hisar

2. श्रीमद्भवगदगीता, साधक– संजीवनी (परिशिष्ट सहित) हिन्दीटीका, गीता प्रेस गोरखपुर।

3. श्रीमद्भगवदगीता यथारूप, प्रकाशन– भक्तिवेदान्त बुक ट्रस्ट, जुहू,मुम्बई– 400049

4. गगनांचल, 11वाँ विश्व हिन्दी सम्मेलन विशेषांक, वर्ष 41, अंकः 2–4,
मार्च–अगस्त 2018 (संयुक्तांक)

5. ब्लॉग–वर्तमान समय में श्रीमद्भागवत गीता की उपयोगिता भाग–1,www.speakingtree.in

[12]वही पृ. सं. 138

6. कल्याण, गीताप्रेस, गोरखपुर, वर्ष–13, संख्या 12

7. कल्याण, गीताप्रेस, गोरखपुर, वर्ष–13, संख्या 3